इकाई 3 मूर्त्तकाल

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 मूर्त्त काल कीअवधारणा

3.3 सिद्धान्तज्योतिष ग्रन्थों में मूर्त्त काल का वर्णन

3.4 मूर्त्तमान का गणितीय पक्ष

3.5 सारांश

3.6 पारिभाषिक शब्द

3.7 बोध प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

काल के मूर्त्तरूप एवं उसके उद्देश्यों का वर्णन वेदों की संहिताओं के अतिरिक्त वेदांग ज्योतिष सहित सभी शास्त्रों में प्रतिष्ठित हैं परन्तु इस इकाई के अन्तर्गत आप कलनात्मक काल एवं एसके अवयवों को समझेंगें। क्योंकि किसी भी राशि की मूर्त्त इकाईयां ही राशि का विस्तृत ज्ञान करवाती हैं।

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप –

- कलनात्मक काल के अवयवों को समझ सकेंगे।
- किसी भी राशि की मूर्त इकाई को जान जायेंगे।
- गणित के आधार पर काल की मूर्त इकाई को समझ पायेंगे।
- काल की मूर्त इकाई को आरोही क्रम में जान पायेंगे।
- मूर्तकाल की प्रासंगिकता और चिन्तन से परिचित होंगे।
- अमूर्त और मूर्तकाल को अलग जानेंगे।

3.1 प्रस्तावना

वेदों में निहित ज्ञान विज्ञान का पल्लवन एवं प्रचार–प्रसार न केवल भारत अपितु विश्व के अनेक देशों में भी रहा है। पूरे विश्व में शायद ही कोई ऐसा देश रहा हो जहां वेदमूलक भारतीय सिद्धान्तों की चर्चा न हुई हो या न हो रही हो। प्रायः सभी देशों के वैज्ञानिकों मनीषियों ने भारतीय वैदिक ग्रन्थों की उपयोगिता को समझकर उनका अध्ययन किया तथा समाज लाभ हेतु वेदमूलक विषयों को गवेषणा की दृष्टि से व्याख्यायित करते हुए अनेक विषयों को प्रायोगिक रूप में भी प्रतिष्टापित किया है।

भारतीय चिन्तन परम्परा के अनुसार वैदिक वाङ्मय में प्रायः सभी विषयों का समावेश है तथा सभी प्रकार के ज्ञान विज्ञान की चर्चा किसी न किसी रूप में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में प्राप्त हुई है। इन्हीं गम्भीर विषयों में से एक गूढ़तम विषय है 'काल'।

संस्कृत वाङ्मय में यह काल अनेक रूपों में परिभाषित होता हुआ ज्योतिषशास्त्र के मुख्य प्रतिपाद्य विषय के रूप में प्रतिष्ठित है।

प्रसंगवश मूर्त्त काल का चिन्तन करने से पहले काल के दार्शनिक रूप को समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है, काल का दार्शनिक रूप वेदों में बड़ी स्पष्टतया अभिव्यक्त है अर्थव संहिता के 19 वे कांड के कालसूक्त में महर्षि भृगु की अमर वाणी काल के दार्शनिक रूप को प्रतिपादित करते हुए निम्नलिखित स्वरूप में दृष्टिगत होती है। वह काल समस्त भुवनों की उत्पत्ति कारक, पोषक एवं लय करने वाला है और सभी में श्रेष्ठ रीति से व्याप्त है, काल के द्वारा ही पूर्व समय के सभी भूत और भविष्य उत्पन्न होते हैं। काल के प्रभाव से ही ऋग्वेद की ऋचाएं और यजुर्वेद के मन्त्र भी प्रकट हुए है काल ने ही क्षय रहित यज्ञ भाग को देवत्व सम्बर्द्धक शक्तियों के निमित्त प्रेरित किया है। काल से ही यक्ष, गन्धर्व, किन्नर और अप्सराओं का प्रादुर्भाव हुआ है सारांश रूप में समस्त लोक काल में ही प्रतिष्ठित हैं।

काल का यह दार्शनिक रूप न मात्र वेदों में अपितु आयुर्वेद के ग्रन्थों में भी वर्णित है आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'हारीत संहिता' में आचार्य हारीत ने चतुर्थ अध्याय के प्रथम स्थान में ही काल का विशिष्ट एवं दार्शनिक रूप प्रस्तुत किया है। आचार्य हारीत के वचनानुसार काल तीन प्रकार के होते हैं –

अतीत अर्थात् वीता हुआ, अनागत अर्थात् आने वाला और वर्तमान अर्थात् चलायमान अब इनके लक्षणों को पृथक्–पृथक् व्यक्त करता हूँ–

कालस्तु त्रिविधो ज्ञेयोऽतीतोऽनागत एवच।
वर्त्तमानस्तृतीयस्तु वक्ष्यामि श्रृणु लक्षणम्।।8।।

(हा.सं., अ 4, श्लो.8)

सभी देव, ऋषि, किन्नर, सिद्ध काल के अधीन हैं और भगवान साक्षात् काल रूपों में ही सृष्टि, स्थिति एवं संहार करने वाला और सर्वत्र विद्यमान एवं सभी जगह समान रूप में एक जैसा काल ही है, काल के प्रभाव से ही विश्व संख्या को प्राप्त होता है

वर्त्तमान में जो कर्मो में दीखता है उसे प्रवर्त्तक काल जानना चाहिए ऐसा आचार्य हारीत का वचन है आचार्य हारीत काल के सनातनत्व को स्पष्ट करते हुए कह रहे हैं कि काल ही जीवों को रचता है काल ही प्रजा को हरता है काल ही शयन करता है काल ही जागता है और यह दुरतिक्रम है अर्थात् उसका अतिक्रमण कोई नहीं कर सकता है।

कालः सृजाति भूतानि कालः संहरते प्रजाः।
कालः स्वपिति जागर्त्ति कालो हि दुरतिक्रम।।

(हा.सं./(अ.4/श्ले.15)

काल के संहारक स्वरूप का वर्णन करते हुए आचार्य कहते हैं कि काल के प्रभाव से ही देवता नष्ट हो जाते हैं और काल ही के प्रभाव से दैत्यादि, सर्पादि भी नष्ट हो जाते हैं राजा लोग और प्रजा जन सहित समस्त जीव काल में ही नष्ट होते हैं, अर्थात् सबका लय काल के प्रभाव से ही होता है। प्रायः पौराणिक मतानुसार भी काल का दार्शनिक रूप यही है यद्यपि पुराणों में भिन्न–भिन्न श्लोक वचन एवं स्वरूप प्राप्त होते हैं उनमें भी काल का यही दार्शनिक रूप परिलक्षित होता है।

3.2 मूर्त्त काल की अवधारणा

''वेदोऽखिलो धर्ममूलम्''। मनुस्म., अ.2/श्लो.6

मनुस्मृति की इस उक्ति के अनुसार समग्र सनातन धर्म का मूल वेदों में ही निहित है। वेद प्रमाण होने से यह भी सिद्ध होता है कि काल का चिन्तन वैदिक काल में भी व्यापक रूप से होता रहा है यदि हम समय की अवधारणा को समझने का प्रयास करें तो सबसे पहले अन्तरिक्ष जो रहस्यों से परिपूर्ण है ने सबसे पहले मानव का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया होगा। अन्तरिक्ष को जानने के क्रम में उनका ध्यान निश्चित रूप से सूर्य और चन्द्र की तरफ भी गया होगा और क्रम से तारा, नक्षत्र और अन्य ग्रह आदि खगोलीय पिण्ड भी प्राचीन भारत में गवेषणा के विषय बने होगें तथा आज भी सम्बद्ध शोधार्थी इसके अन्वेषण में संलग्न हैं।

मनुष्य लोक व्यवहार के लिए काल के मूर्त्तरूप घटि, दिन, मास, वर्ष आदि के लिए आज भी सौरमण्डल पर ही निर्भर है तथा मानव की जीवन यात्रा में सूर्य, चन्द्र तथा नक्षत्रगण सतत् जीवन सहायक की भूमिका निभाते हैं, धर्मशास्त्र के अनुपालन में सूर्य भी चन्द्र नक्षत्रादि की काल विशेष में अनिवार्यता रहती है।

भारतीय चिन्तन परम्परा के अनुसार सृष्ट्युत्पत्ति के साथ ही जब मानव धरती पर अवतरित हुआ होगा। ज्योतिषशास्त्र का चिन्तन भी अस्तित्व में आया होगा। क्यों कि वैदिक काल में काल के मूर्त्त रूप का चिन्तन प्रचुर मात्रा में दृष्टिगत होता है। नारायण उपनिषद में कला काष्ठा का वर्णन निम्नलिखित रूप में आया है–

सर्वे निकेषा जज्ञिरे विद्युतः पुरुषादधि।
कला मुहूर्त्ता काष्ठा चाहोरात्रश्च सर्वशः।। (ना.उप./अनु.1)

यहां मूर्त्तकाल की इकाइयों के अन्तर्गत कला, मुहूर्त्त, काष्ठा इत्यादि का जो वर्णन प्राप्त होता है वही चिन्तन तैत्तरीय आरण्यक में भी प्राप्त है।

इसी के साथ–साथ वेदों में दिन के लिए वासर शब्द का प्रयोग भी हुआ जो ज्योतिष की दृष्टि से मूर्त्तकाल की इकाई है।

''सोमराजन प्रण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि''।

ऋ.सं./8/48/7

तिथि के विषय में भी वृहवृचब्राह्मण में उल्लिखित तिथि का लक्षण निम्नलिखित है।

''यां पर्यस्तमियादभ्युदियादिति सा तिथिः''।

अतः इन सब उक्तियों से यह सिद्ध होता है कि मानव की उत्पत्ति के वाद वैदिक काल तक ज्योतिषीय काल गणना की मूर्त्त इकाइयों की उत्पत्ति और विकास हो चुका था वैदिक काल के वाद वेदांग ज्योतिषकाल में भी मुहूर्त्त, मास, अयन, वर्षादि काल के मूर्त्त रूपों का खूब विकास हुआ।

वेदांग ज्योतिष के आर्च ज्योतिष में श्लोक संख्या 6 में उत्तरायण और दक्षिणायन का स्पष्ट उल्लेख है और यह भी उल्लिखित है की उत्तरायण में दिन मान बढ़ता है रात्रिमान घटता है और दक्षिणायन में रात्रिमान बदलता है और फिर दिनमान घटता है। अधिकतम हास वृद्धि और न्यूनतम हास वृद्धि दोनों का ही उल्लेख है।

काल की सूक्ष्मता को जानने का यह मूलभूत चिन्तन इससे भी अधिक प्रौढ़ता को प्राप्त हुआ पौराणिक काल में जब सिद्धान्त ज्योतिष काल का उदय हुआ काल की अवधारणा जो वैदिक काल से आज तक चली आ रही थी सिद्धान्तज्योतिष रूपी प्रांगण में और भी अधिक पल्लवित और पुष्पित हुई, काल की अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए हमें यह जान लेना अत्यावश्यक है कि वैदिक कालीन ज्योतिष ज्ञान और वेदांग कालीन ज्योतिष विज्ञान तत्कालीन परिस्थिति अनुसार शायद समीचीन रहे होंगे परन्तु ग्रहों की स्पष्ट गतिस्थिति का ज्ञान कराने के लिए वह अपर्याप्त है अतः कालान्तर में सिद्धान्तज्योतिष काल खण्ड प्रारम्भ हुआ।

सिद्धान्त ज्योतिष के सभी ग्रन्थों में सूर्यसिद्धान्त आर्षग्रन्थ होने के कारण प्रधान है। अतः व्यवहार योग्य काल के मूर्त्त रूप का वर्णन सूर्यसिद्धान्त के मध्यमाधिकार में **'प्राणादि कथितो मूर्त्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्तसंज्ञक'** इस उक्ति से स्पष्ट होता है कि त्रुटि से लेकर प्राण तक की सूक्ष्म काल गणना अमूर्त संज्ञक है और प्राणादि से लेकर ब्रह्मा की आयु पर्यन्त कालगणना की इकाईयां मूर्त्त संज्ञक हैं। सिद्धान्तज्योतिष के प्रायः सभी ग्रन्थों में काल के मूर्त्त रूप की अवधारणा का यही स्वरूप वर्णित है।

3.3 सिद्धान्तज्योतिष ग्रन्थों में मूर्त्त काल का वर्णन

सूर्यसिद्धान्त में प्राणादि से आरम्भ कर **''षड्भिः प्राणैः विनाड़ी स्यात्''** इस उक्ति से स्पष्ट कर दिया है कि 6 प्राण एक पल तुल्य काल होता है और 60 पल 1 घटी तुल्य काल होता है। सिद्धान्ततत्वविवेक ग्रन्थ में भी आचार्य कमलाकर ने सूर्यसिद्धान्तोक्त मत का ही प्रतिपादन किया है जो **(असुभिः) 'तेः पलं षड्भिः खषड्भिस्तैघटी'** इस उक्ति से भी स्पष्ट है।

सिद्धान्तशिरोमणि में भी आचार्य भास्कर ने **'पलं तैर्घटिका खषड्भिः'** 60 पलों की घटिका कही है। आचार्य आर्यभट्ट ने भी 'आर्यभट्टीय' कालक्रम पाद में **'षष्टिश्च विनाडिका नाड़ी'** इस उक्ति से यही बात कही है।

आचार्य सामन्त चन्द्रशेखर ने भी **'प्राणादिकोऽसौ व्यवहारयोग्यो मूर्त्तः'** इस प्रकार अपने सिद्धान्तदर्पण में प्राणादि मूर्त्त काल को व्यवहारयोग्य कहा है।

पलं च सा दिक् (10) गुणिता क्षणः स्यात्।
तैः षड्भिरेका घटिका च नाडी ।। (सि.द, म.अ, श्लोक 28)

आचार्य चन्द्रशेखर सामन्त इसी बात को अन्य विधि से कह रहे हैं।

10 पल का 1 क्षण होता है और 6 क्षण का घटी तुल्य काल होता है, इसी न्याय से 1 घटी 60 पल तुल्य सिद्ध होती है।

सिद्धान्तज्योतिष के प्रायः सभी ग्रन्थों में मूर्त काल का आरम्भिक मान तुल्य और प्रासंगिक भी है मूर्त्तकाल के इसी क्रम में जैसे प्राण (असु), पल, घटी, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, मनु, कल्प तक का मान सिद्धान्तज्योतिष की दृष्टि में सर्वथा समान है अर्थात् 60 घटी का नाक्षत्र अहोरात्र होता है उसे ही एक नाक्षत्र दिन कहते हैं इसी प्रकार 30 नक्षत्र दिनों की संख्या मास कहलाती है और 12 मास का काल वर्ष तुल्य काल होता है यह मान सर्वविदित एवं सर्वग्राह्य भी है।

इसके अतिरिक्त सिद्धान्त ग्रन्थों में मूर्त्तकाल का बृहद्रूप युग, महायुग, मनु एवं कल्प आदि बृहद् मूर्त्त इकाइयों में वर्णित है। मूर्त्त काल की बृहद् इकाइयों का वर्णन पुराणों में भी वर्णित है अतः उसी कालगणना को गणित से स्पष्ट करते हैं।

3.4 मूर्त्तमान का गणितीय पक्ष

काल के मूर्त स्वरूप के अन्तर्गत प्राप्त इकाईयों का वर्णन गणितीय रूप में निम्नलिखित है–

10 दीर्घाक्षर उच्चारण काल	= 1 प्राण (असु) श्वास
6 प्राण	= 1 विनाड़ी (पल)
60 पल	= 1 नाड़ी (घटी)
60 घटी	= 1 नाक्षत्र दिन
30 नाक्षत्र दिन	= 1 नाक्षत्र मास
2 मास	= 1 ऋतु
6 मास	= 1 अयन
2 अयन	= 1 वर्ष
1 वर्ष	= 1 दिव्य अहोरात्र
360 सौर वर्ष	= 1 दिव्य वर्ष

कलियुग का वर्ष प्रमाण =432000 सौर वर्ष

द्वापर युग का वर्ष प्रमाण=864000 सौर वर्ष

त्रेतायुग का वर्ष प्रमाण =1296000 सौर वर्ष

सतयुग का वर्ष प्रमाण =1728000 सौर वर्ष

$\overline{4320000}$

1 चतुर्युग =1 महायुग = 4320000 सौर वर्ष

360 सौरवर्ष = 1 दिव्य वर्ष

1 महायुग में दिव्यवर्ष $=\frac{4320000}{360} = 12000$

अर्थात् 1 महायुग में 12000 दिव्य वर्ष होते हैं।

अतः

1 महायुग	=4320000 सौर वर्ष = 12000 दिव्य वर्ष
1 मनु	=71 महायुग = 71 × 4320000
1 मनु	=306720000 सौर वर्ष

क्योंकि

युगानां सप्ततिस्सैका मन्वन्तरमिहोच्यते।
कृताब्दसङ्ख्या तस्यान्ते सन्धि प्रोक्तो जलप्लवः।।

–सू.सि., म.अ., श्लोक 18

सूर्यसिद्धान्त के अनुसार प्रत्येक मनु के पहले और बाद में सतयुग वर्ष तुल्य एक सन्धि होती है।

प्रत्येक कल्प के आदि में भी 1 सतयुग तुल्य सन्धि होती है इस प्रकार 14 मनु और 15 सन्धियों (सतयुग तुल्य) का योग तुल्य काल 1 कल्प कहलाता है। यही कल्प ब्रह्मा का दिनमान होता है इसी मान से द्वितीय कल्प ब्रह्म का रात्रिमान होता है तथा इस प्रकार दो कल्प से ब्रह्म का अहोरात्र पूर्ण होता है।

जैसा कि सूर्यसिद्धांत में **'कल्पो ब्राह्ममहः प्रोक्तं शर्वरी तस्य तावती'** के रूप में वर्णित भी है।

1 मनु = 306720000 सौर वर्ष

14 मनु = 14 × 306720000 सौर वर्ष

14 मनु = 4294080000 सौर वर्ष

+ 15 सन्धियां = 15 × 1728000 (कृतयुग वर्ष प्रमाण)

= 15 सन्धियां = + 25920000सौर वर्ष

1 कल्प = 14 मनु + 15 सन्धियां

= 429408000 + 25920000

1 कल्प = 4320000000 सौर वर्ष

2 कल्प = 8640000000 सौर वर्ष

2 कल्प = 1 ब्रह्म अहोरात्र

1 ब्रह्म वर्ष = 720 कल्प

100 ब्रह्म वर्ष = 72000 कल्प = पूर्व ब्रह्म

सूर्यसिद्धान्त की **"परमायुः शतं तस्य तयाऽहोरात्रसंख्यया"** इस उक्ति से यह स्पष्ट है कि ब्रह्मा की परमायु उन्हीं के अहोरात्र मान से 100 वर्ष तुल्य है।

अतः 1 पूर्ण ब्रह्म काल = 72000 कल्प

1 कल्प में दिनवर्ष का मान बताते हैं

1 कल्प में सौरवर्ष प्रमाण = 4320000000

1 कल्प में दिव्यवर्ष प्रमाण $= \frac{4320000000}{360}$

1 कल्प में दिव्य वर्ष = 12000000 दिव्य वर्ष

1 कल्प में युग $= \frac{4320000000}{432000}$

= 1000 महायुग

1 महायुग में दिव्य वर्ष $= \frac{4320000}{360}$

1 महायुग में दिव्य वर्ष = 12000 दिव्य वर्ष

महायुग अथवा मन्वन्तर के ये सभी मान प्रमाण स्मृति तथा पुराणादि धर्मशास्त्रों में विस्तारपूर्वक स्पष्टतया उल्लिखित है परन्तु आचार्य आर्यभट्ट ने कालगणना प्रसंग में अपने ग्रन्थ आर्यभट्टीयम् में युगों के मान कुछ भिन्न दिए हैं। आचार्य ने 14 मनु का मान 1 ब्रह्मा के दिन तुल्य कहा है और 1 मनु 72 महायुग तुल्य कहा है यहां 1008 महायुगों का 1 ब्रह्मा दिन कहा है अर्थात् 14 × 72 = 1008 ।

वटेश्वरसिद्धान्त में भी आचार्य वटेश्वर ने भी **'दन्ताब्धयोऽयुत हता (4320000) युगमर्क (वर्षा दस्राद्रयो 72) युगगवा मनुरेक उक्तः'** इस उक्ति से स्पष्ट किया है कि 72 महायुग का 1 मनु होता है और 14 मनु का 1 कल्प होता है सिद्धान्त ज्योतिष जगत में मात्र आर्यभट्ट एवं आचार्य वटेश्वर का ही मत ऐसा है जहां 72 महायुगों का 1 मनु कहा गया है जिसके अनुसार और 1008 महायुग 1 कल्प तुल्य काल होता है तथा विष्णुपुराण के अनुसार यह कल्प भगवान विष्णु के एक निमेष तुल्य काल का होता है।

काल के मूर्त्त रूप का जो व्यवहारिक चिन्तन शास्त्रों में वर्णित है उसके अतिरिक्त भी कुछ इकाईयां सम्प्रति आधुनिक काल में व्यवहार में प्रयुक्त होती हैं। जैसे दश वर्षो के तुल्य काल दशक कहलाता है सौ वर्षो का काल शताब्दी कहलाता है और एक हजार वर्षो के तुल्य काल को सहस्राब्दी काल कहा जाता है। इस मूर्त्त काल को सम्प्रति सेकेण्ड, मिनट, घण्टा, आदि में व्यवहार करते हैं।

3.5 सारांश

मूर्त्त काल का स्वरूप वेदकाल से ही स्पष्ट दिखाई देता है। काल के विषय में यह भी स्पष्ट है कि मानव ने मूर्त्तकाल की जो इकाईयां व्यवहार योग्य निर्धारित की है उन सभी इकाईयों का मूल सूर्य चन्द्र नक्षत्रादि आकाशस्थ पिण्डों पर ही निर्भर है। काल के सतत प्रवाह में भिन्न–भिन्न काल खण्डों को भिन्न–भिन्न नामों से जाना जाता है तथा काल की जो इकाई व्यवहार योग्य होती है वह काल का मूर्त्तरूप कहलाती है इसलिए प्राणादि से लेकर कल्प तक का जो काल खण्ड है वह भी अनेक प्रकार की इकाईयों में परिगणित हैं। जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से प्राण, पल, घटी, अहोरात्र, पक्ष, मास, वर्ष, युग, महायुग, मनु/मन्वन्तर, कल्प आदि इकाईयां प्रचलित हैं। इस काल का प्रवाह अनादि है और अनन्त है जिसका कोई अतिक्रमण नहीं कर सकता।

3.6 परिभाषिक शब्द

मास – 30 दिनों का समूह।

पक्ष – चान्द्रमास में 15–15 तिथियों के 2 पक्ष होते हैं जिन्हें कृष्ण व शुक्ल पक्ष के नाम से जाना जाता है।

वर्ष – 12 मास का एक वर्ष होता है। वर्ष व्यवहार में सौरवर्ष का ग्रहण किया जाता है।

कल्प – ब्रह्मा का दिन प्रमाण।

सन्धि – युग या मनु के आदि और अन्त का द्वादशांश तुल्य काल जो दोनों मिलकर 1/6 के तुल्य होता है।

3.7 बोध प्रश्न

1. युग एवं मनु व्यवस्था का निरूपण कीजिए।
2. मूर्त्तकाल के उद्देश्यों को स्पष्ट कीजिए।
3. मूर्त्तकाल क्या है विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए?
4. ब्रह्मा की पूर्णायु कितनी है वर्णन कीजिए?
5. मूर्त्तकाल की इकाईयों का प्रमाण स्पष्ट कीजिए?

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

क्र.	मूल ग्रंथनाम	लेखक	प्रकाशन	ई.वर्ष
1	अमरकोशः	प्रो. सत्येन्द्र मिश्र जगदीश	संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर	2012
2	आर्यभट्टीयम्	साम्बशिव शास्त्री	राजकीय मुद्रण यन्त्रालय,	1931

			त्रिवेन्द्रम	
3	ज्योतिषशास्त्रे दिग्देशकालज्ञानम्	डा. नागेन्द्र पाण्डेय	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी	1990
4	ज्योतिषसिद्धांत संग्रहः	विन्ध्येश्वरी प्रसाद द्विवेदी	ब्रजभूषणदास एंड कम्पनी, वाराणसी	1912
5	नारदसंहिता	श्री अभय कात्यायन	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी	2012
6	ब्रह्मस्फुटसिद्धांतः	रामस्वरूप शर्मा	Indian institute of astronomical and Sanskrit research, Delhi	1966
7	भारतीय ज्योतिष	बालकृष्ण दीक्षित	उ.प्र.संस्थान, लखनऊ	2002
8	संस्कृत हिन्दी शब्दकोश	वामन शिवराम आप्टे	अशोक प्रकाशन नई सड़क, दिल्ली	2006
9	सिद्धांततत्त्वविवेकः	कृष्णचंद्र द्विवेदी	सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी	1993
10	सिद्धांतदर्पणः	अरुण कुमार उपाध्याय	नाग प्रकाशक जवाहर नगर, नईदिल्ली	1996
11	सिद्धांतशिरोमणिः	सत्यदेव शर्मा	चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी	2011
12	सिद्धांतशेखरः	सत्यदेव शर्मा	चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी	2015
13	सूर्यसिद्धांतः	कपिलेश्वर	टीकाकार चौखम्बा संस्कृत भवन, वाराणसी	2011